



जन्म : 19 सितंबर, सन् 1927 (उत्तर प्रदेश)
प्रमुख रचनाएँ : चक्रव्यूह (1956), परिवेश:हम तुम, अपने
सामने, कोई दूसरा नहीं, इन दिनों (काव्य संग्रह); आत्मजयी
(प्रबंध काव्य); आकारों के आस-पास (कहानी संग्रह); आज
और आज से पहले (समीक्षा); मेरे साक्षात्कार (सामान्य)
प्रमुख पुरस्कार : साहित्य अकादेमी पुरस्कार, कुमारन आशान
पुरस्कार, व्यास सम्मान, प्रेमचंद पुरस्कार, लोहिया सम्मान,
कबीर सम्मान. जानपीठ परस्कार



न जाने कब से बंद / एक दिन इस तरह खुला घर का दरवाज़ा / जैसे गर्द से ढँकी / एक पुरानी किताब

गर्द से ढँकी हर पुरानी किताब खोलने की बात कहने वाले कुँवर नारायण ने सन् 1950 के आस-पास काव्य-लेखन की शुरुआत की। उन्होंने किवता के अलावा चिंतनपरक लेख, कहानियाँ और सिनेमा तथा अन्य कलाओं पर समीक्षाएँ भी लिखीं हैं, किंतु किवता की विधा को उनके सृजन-कर्म में हमेशा प्राथमिकता प्राप्त रही। नयी किवता के दौर में, जब प्रबंध काव्य का स्थान प्रबंधत्व की दावेदार लंबी किवताएँ लेने लगीं तब कुँवर नारायण ने आत्मजयी जैसा प्रबंध काव्य रचकर भरपूर प्रतिष्ठा प्राप्त की। आलोचक मानते हैं कि उनकी "किवता में व्यर्थ का उलझाव, अखबारी सतहीपन और वैचारिक धुंध के बजाय संयम, परिष्कार और साफ़-सुथरापन है।" भाषा और विषय की विविधता उनकी किवताओं के विशेष गुण माने जाते हैं। उनमें यथार्थ का खुरदरापन भी मिलता है और उसका सहज सौंदर्य भी। सीधी घोषणाएँ और फ़ैसले उनकी किवताओं में नहीं मिलते क्योंकि जीवन को मुकम्मल तौर पर समझने वाला एक खुलापन उनके किव-स्वभाव की मूल विशेषता है। इसीलिए संशय, संभ्रम प्रश्नाकुलता उनकी किवता के बीज शब्द हैं।



आरोह

कुँवर जी पूरी तरह नागर संवेदना के किव हैं। विवरण उनके यहाँ नहीं के बराबर है, पर वैयक्तिक और सामाजिक ऊहापोह का तनाव पूरी व्यंजकता में सामने आता है। एक पंक्ति में कहें तो इनकी तटस्थ वीतराग दृष्टि नोच-खसोट, हिंसा-प्रतिहिंसा से सहमे हुए एक संवेदनशील मन के आलोडनों के रूप में पढ़ी जा सकती है।

यहाँ पर कुँवर नारायण की दो किवताएँ ली गई हैं। पहली किवता है— किवता के बहाने जो इन दिनों संग्रह से ली गई है। आज का समय किवता के वजूद को लेकर आशंकित है। शक है कि यांत्रिकता के दबाव से किवता का अस्तिव नहीं रहेगा। ऐसे में यह किवता—किवता की अपार संभावनाओं को टटोलने का एक अवसर देती है। किवता के बहाने यह एक यात्रा है जो चिड़िया, फूल से लेकर बच्चे तक की है। एक ओर प्रकृति है दूसरी ओर भिवष्य की ओर कदम बढ़ाता बच्चा। कहने की आवश्यकता नहीं कि चिड़िया की उड़ान की सीमा है, फूल के खिलने के साथ उसकी परिणित निश्चित है, लेकिन बच्चे के सपने असीम है। बच्चों के खेल में किसी प्रकार की सीमा का कोई स्थान नहीं होता। किवता भी शब्दों का खेल है और शब्दों के इस खेल में जड़, चेतन, अतीत, वर्तमान और भिवष्य सभी उपकरण मात्र हैं। इसीलिए जहाँ कहीं रचनात्मक ऊर्जा होगी वहाँ सीमाओं के बंधन खुद-ब-खुद टूट जाते हैं। वो चाहें घर की सीमा हो, भाषा की सीमा हो या फिर समय की ही क्यों न हो।

दूसरी किवता है **बात सीधी थी पर** जो कोई दूसरा नहीं संग्रह में संकलित है। किवता में कथ्य और माध्यम के द्वंद्व उकेरते हुए भाषा की सहजता की बात की गई है। हर बात के लिए कुछ खास शब्द नियत होते हैं ठीक वैसे ही जैसे हर पेंच के लिए एक निश्चित खाँचा होता है। अब तक जिन शब्दों को हम एक-दूसरे के पर्याय के रूप में जानते रहे हैं उन सब के भी अपने विशेष अर्थ होते हैं। अच्छी बात या अच्छी किवता का बनना सही बात का सही शब्द से जुड़ना होता है और जब ऐसा होता है तो किसी दबाव या अतिरिक्त मेहनत की ज़रूरत नहीं होती वह सहिलयत के साथ हो जाता है।



कविता के बहाने

किवता एक उड़ान है चिड़िया के बहाने किवता की उड़ान भला चिड़िया क्या जाने बाहर भीतर इस घर, उस घर किवता के पंख लगा उड़ने के माने चिडिया क्या जाने?

किवता एक खिलना है फूलों के बहाने किवता का खिलना भला फूल क्या जाने! बाहर भीतर इस घर, उस घर बिना मुरझाए महकने के माने फूल क्या जाने? किवता एक खेल है बच्चों के बहाने बाहर भीतर यह घर, वह घर सब घर एक कर देने के माने बच्चा ही जाने।



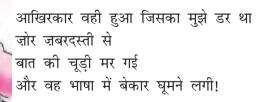
आरोह

बात सीधी थी पर

बात सीधी थी पर एक बार भाषा के चक्कर में जरा टेढ़ी फँस गई।

> उसे पाने की कोशिश में भाषा को उलटा पलटा तोड़ा मरोड़ा घुमाया फिराया कि बात या तो बने या फिर भाषा से बाहर आए— लेकिन इससे भाषा के साथ साथ बात और भी पेचीदा होती चली गई।

> > सारी मुश्किल को धैर्य से समझे बिना मैं पेंच को खोलने के बजाए उसे बेतरह कसता चला जा रहा था क्यों कि इस करतब पर मुझे साफ़ सुनाई दे रही थी तमाशबीनों की शाबाशी और वाह वाह।



हार कर मैंने उसे कील की तरह उसी जगह ठोंक दिया।



ऊपर से ठीकठाक पर अंदर से न तो उसमें कसाव था न ताकत! बात ने, जो एक शरारती बच्चे की तरह मुझसे खेल रही थी, मुझे पसीना पोंछते देख कर पूछा— "क्या तुमने भाषा को सहुलियत से बरतना कभी नहीं सीखा?"











कविता के साथ

- इस कविता के बहाने बताएँ कि 'सब घर एक कर देने के माने' क्या है?
- 2. 'उडने' और 'खिलने' का कविता से क्या संबंध बनता है?
- 3. कविता और बच्चे को समानांतर रखने के क्या कारण हो सकते हैं?
- 4. कविता के संदर्भ में 'बिना मुरझाए महकने के माने' क्या होते हैं?
- 5. 'भाषा को सह्लियत' से बरतने से क्या अभिप्राय है?
- 6. बात और भाषा परस्पर जुड़े होते हैं, िकंतु कभी-कभी भाषा के चक्कर में 'सीधी बात भी टेढ़ी हो जाती है' कैसे?
- 7. बात (कथ्य) के लिए नीचे दी गई विशेषताओं का उचित बिंबों/मुहावरों से मिलान करें।

बिंब/मुहावरा

- (क) बात की चूड़ी मर जाना
- (ख) बात की पेंच खोलना
- (ग) बात का शरारती बच्चे की तरह खेलना
- (घ) पेंच को कील की तरह ठोंक देना
- (ङ) बात का बन जाना -

विशेषता

न कथ्य और भाषा का सही सामंजस्य बनना बात का पकड़ में न आना बात का प्रभावहीन हो जाना बात में कसावट का न होना

बात को सहज और स्पष्ट करना



आरोह



कविता के आसपास

बात से जुड़े कई मुहावरे प्रचलित हैं। कुछ मुहावरों का प्रयोग करते हुए लिखें।

व्याख्या करें

जोर जबरदस्ती से
 बात की चूड़ी मर गई
 और वह भाषा में बेकार घूमने लगी।

चर्चा कीजिए

- * आधुनिक युग में कविता की संभावनाओं पर चर्चा कीजिए?
- चूड़ी, कील, पेंच आदि मूर्त उपमानों के माध्यम से किव ने कथ्य की अमूर्तता को साकार िकया
 है। भाषा को समृद्ध एवं संप्रेषणीय बनाने में, बिबों और उपमानों के महत्त्व पर पिरसंवाद
 आयोजित करें।



आपसदारी

 सुंदर है सुमन, विहग सुंदर मानव तुम सबसे सुंदरतम।

> पंत की इस कविता में प्रकृति की तुलना में मनुष्य को अधिक सुंदर और समर्थ बताया गया है। 'कविता के बहाने' कविता में से इस आशय को अभिव्यक्त करने वाले बिंदुओं की तलाश करें।

2. प्रतापनारायण मिश्र का निबंध 'बात' और नागार्जुन की कविता 'बातें' ढूँढ् कर पढ़ें।

